बाधा उपस्थित कर रहा है। करुणा का प्रयोग कहाँ करना उचित है, यह कोई नहीं जानता। डूबते मनुष्य के वस्त्रों के लिए करुणा करना बुद्धिहीनता होगी; स्थूल पाँचभौतिक देह रूपी बाह्य परिधान की रक्षा करने से अज्ञान-सागर में पतित जीव को बचाया नहीं जा सकता। ऐसा न जानकर जो बाह्य परिधान के लिए शोक करता है, वह शूद्र है। अर्जुन तो क्षत्रिय है, इसलिए ऐसा व्यवहार उसके योग्य नहीं। भगवान् श्रीकृष्ण अज्ञानी जीव के शोक का छेदन करने में पूर्ण समर्थ हैं। यही कारण है कि उन्होंने भगवद्गीता का उपदेश किया। इस अध्याय में परम प्रमाण भगवान् श्रीकृष्ण ने प्राकृत देह तथा आत्मा के तात्त्विक अध्ययन के द्वारा स्वरूप-साक्षात्कार करने की शिक्षा दी है। अपने यथार्थ आत्म-स्वरूप की दृढ़ धारणा में स्थित होकर कर्म करने से यह अनुभूति हो सकती है।

श्रीभगवानुवाच।
कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्।
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन।।२।।

24.1

श्रीभगवान् उवाच=भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा; **कुतः**=किस कारण से; **त्वा**=तुझे; **कश्मलम्**=अज्ञान; **इदम्**=यह; **विषमे**=इस विषम स्थिति में; **समुपस्थितम्**=प्राप्त हुआ; **अनार्य**=जीवन की श्रेष्ठ गरिमा को न जानने वालों द्वारा; **जुष्टम्**=आचरित; **अस्वर्ग्यम्**=उच्च लोकों की प्राप्ति न कराने वाला; **अकीर्ति**=अपयश का; **करम्**=कारण; **अर्जुन**=हे अर्जुन।

अनुवाद

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, हे अर्जुन! तुझे संग्राम की इस विषम स्थिति में यह अज्ञान किस कारण से प्राप्त हुआ? यह न तो उनके योग्य है, जो जीवन की श्रेष्ठ गरिमा को जानते हैं और न उच्च लोकों की प्राप्ति कराने वाला है, अपितु अपयश का कारण है।।२।।

तात्पर्य

श्रीकृष्ण साक्षात् **भगवान्** हैं। सम्पूर्ण गीता में उन्हें 'भगवान्' ही कहा गया है। 'भगवान्' उस परतत्त्व की अवधि हैं, जिसकी प्राप्ति सर्वव्यापक निर्विशेष ब्रह्म, प्राणीमात्र के हृदयव्यापी परमात्मा और भगवान्, ज्ञान की इन तीन श्रेणियों में होती है। श्रीमद्भागवत में इस अद्वय तत्त्व का वर्णन इस प्रकार है:

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयम्।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते।।

''तत्त्ववित् को परतत्त्व की अनुभूति 'ब्रह्म, परमात्मा तथा भगवान्', ज्ञान के इन तीन स्तरों पर होती है, जिन में परस्पर अभेद है।'' (श्रीमद्भागवत १.२.११) इन